
चन्दामामा
माँ-बच्चों का मासिक पत्र
1st OCT. 52
6
as



कहते हैं कि किसी देश में दुर्जन सिंह नामक एक राजा रहता था। वह अपनी सेना के साथ गाँवों और शहरों पर छापे मारता और लोगों को लूटता-खसोटता चलता था। जो कोई उसके खिलाफ सिर उठाता, उसे कड़ी सज़ा देता था । इसी से उसका नाम सुनते ही लोग डर से काँपने लग जाते थे।

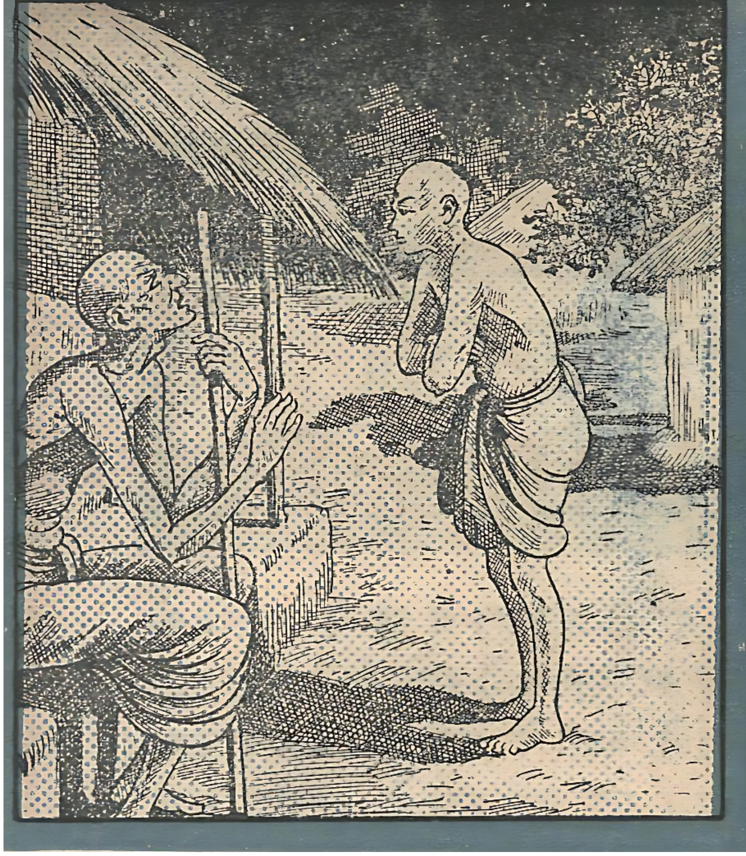
उसी देश में "चतुर-नगरी" नाम का एक शहर था। उस शहर के सभी लोग बहुत चतुर माने जाते थे। दूरदर्शी होने के कारण उन लोगों ने शहर के चारों ओर एक ऊँची दीवार खड़ी करवा ली थी। उन लोगों ने अपनी चतुरता से व्यापार इत्यादि द्वारा अपार धन कमा लिया था। किसी दुष्ट ने दुर्जनसिंह से कहा कि "चतुर-नगरी" को लूटने से उसे बहुत धन मिलेगा। यह सुन कर राजा सेना लेकर चल पड़ा।

दूर ही आसमान में धूल के बादलों को देख कर चतुर-नगरी वालों को आशङ्का हुई। उन्होंने नगरी के सभी फाटक बन्द करवा दिए। राजा जब शहर के नज़दीक आया तो उसे फाटक बन्द देख कर बड़ा क्रोध आया। उसने हुक्म दिया-"दरवाजा तोड़ कर अन्दर घुस जाओ और औरत-मर्द, बूढ़े- बच्चे जो मिलें, सबके नाक-कान काट डालो। तब इनकी अक्ल ठिकाने आएगी।"

शहर वालों को भी राजा का हुक्म सुन पड़ा। फिर भी उन लोगों ने दरवाज़ा न खोला।

तब राजा के सिपाही दरवाज़ा तोड़ने की कोशिश करने लगे। अब तो नगर-निवासी बड़े सोच में पड़े। सेना अगर घुस आई, तो उनके घर-बार तो जाएँगे ही। साथ ही उनकी जान भी न बच पाएगी। वे चिन्ता में पड़ गए। आखिर मुखिया ने कहा -"अरे भाई ! दौड़ कर अन्धे दादा

सन्त शरन



को सारी बात सुना दो और पूछ आओ कि वे क्या करने को कहते हैं?"

कुछ लोग अन्धे दादा के पास दौड़ते हुए गए। सब कुछ सुन कर अन्धे दादा ने कहा-"बेटा ! जाकर मुखिया से कह दे कि कभी-कभी मूर्खता ही चतुराई से ज्यादा लाभकर होती है।"

वे लोग दौड़े आए और दादा का सन्देश मुखिया को सुना दिया। मुखिया ने सन्देश सुन कर सोचा-"मूर्खता चाहिए ? अच्छा ! इसका मतलब मैं समझ गया। भाइयो ! सुनो ! सेना नगर में घुस आए तो ऐसा व्यवहार करो जिससे वे तुम को पागल समझ लें। बस, सङ्कट टल जाएगा। जाओ ! सब लोग अपनी-अपनी जगह चले जाओ और एक दम मूर्खों-सा अभिनय करो !"

सब लोग अपनी-अपनी जगह चले गए। थोड़ी देर में फाटक तोड़ कर राजा के सिपाही नगर में घुस आए। सबसे पहले मुखिया ही उनको दीख पड़ा। वह एक कुँए से पानी खींच-खींच कर उड़ेलता जा रहा था। राजा ने सिपाहियों को हुक्म दिया-"इसे पकड़ लो और नाक-कान काट लो!" एक सैनिक ने जाकर उसकी बाँह पकड़ी और कहा-"इधर आओ!"

"ज़रा टहरो भैया ! चाँद कुँए में गिर गया ! उसे बाहर निकाल रहा हूँ।" मुखिया ने उसकी ओर देखे बिना जवाब दिया।

"क्या कहा ? चाँद कुँए में गिर गया है !" सैनिक ने हैरान होकर पूछा। "जी ! कल ही रात को चाँद कुँए में गिर गया। तभी से उसे निकाल रहा हूँ।" मुखिया ने कहा।

"पागल कहीं का ! चाँद की परछाईं देख कर तू समझता है कि चाँद कुँए में गिर गया है।" यह कह कर सिपाही राजा के पास लौट आया और बोला-"हुजूर ! यह

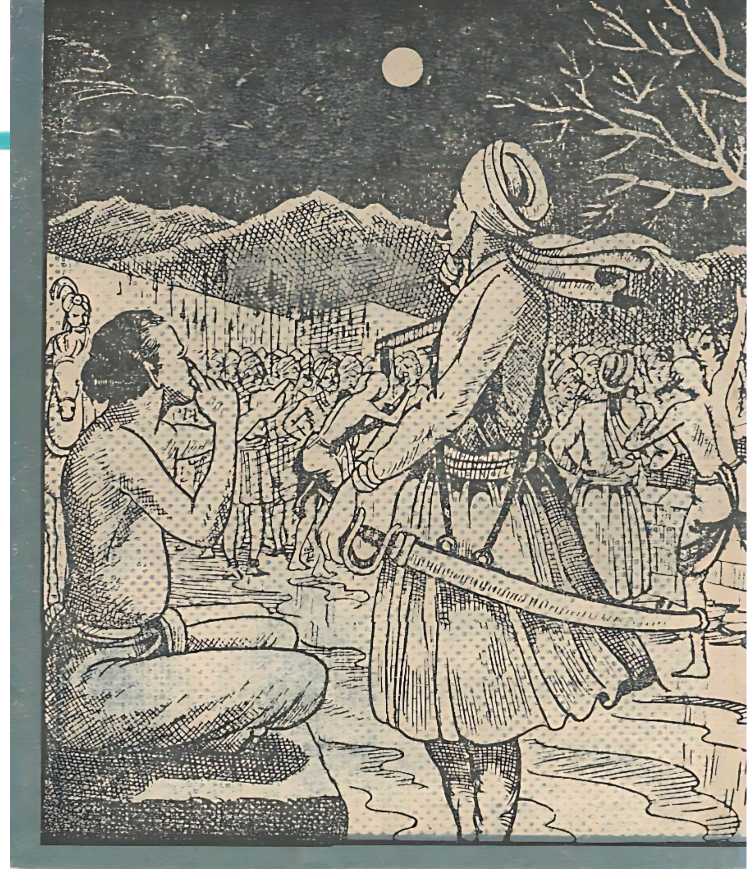
तो पागल है ! इसको सज़ा देकर क्या कीजिएगा ?"

यह सुन कर राजा ने कहा-"अच्छा ! छोड़ दो उसे ! चलो, उधर कोई दीवार बना रहे हैं। उनकी खबर लो!" सिपाही ने दीवार बनाने वालों को बुलाया। वे बोले-"ठहरो भैया ! दीवार जोड़ने दो, नहीं तो चिड़ियाँ उड़ जाएँगी।"

"चिड़ियाँ ! कैसी चिड़ियाँ ?" सिपाही ने पूछा। "देखो ! सामने के पेड़ पर चिड़ियाँ बैठी हुई हैं। वे हर साल हमारे खेत की फसल खा जाती हैं। दीवार बना कर हम उन्हें पकड़ लेना चाहते हैं।" उन्होंने कहा।

"क्या तुम लोगों की अक्ल चरने गई है ! दीवार बना कर चिड़ियों को कैसे पकड़ोगे ?

चिड़ियाँ तो ऊपर से उड़ जाएँगी !" यह कह कर सिपाही लौट गए और राजा से बोले-"'हुजूर ! वे तो और भी उल्लू हैं !" राजा ने कहा-"अच्छा ! छोड़ो उन्हें ! उधर देखो, कोई एक नथुना बन्द करके दूसरे नथुने से साँस छोड़ रहा है ! उसे पकड़ लो।" एक सिपाही उस आदमी के पास गया। सिपाही को देखते ही उसने



कहा-"सिपाही जी ! मुझे आँखों से अच्छी तरह दिखाई नहीं देता है। बताना तो ज़रा ! क्या उस पहाड़ के पास एक धौंकनी नहीं चल रही है ?" तब सिपाही ने उधर देख कर जवाब दिया-"कहाँ ? मुझे तो कुछ नहीं दिखाई देता। वह धौंकनी कितनी दूर है ?" "कोई एक मील होगी। उसी के लिए मैं ज़ोर-ज़ोर से साँस छोड़ रहा हूँ।" उस आदमी ने जवाब दिया। तब सिपाही ठहाका मार कर हँसने लगा और कहने लगा-"अरे ! तुम तो मूर्खराज जान पड़ते हो ! क्या तुम समझते हो कि तुम्हारी साँस एक मील तक जाएगी और उस धौंकनी में घुसेगी ?" यह कह कर वह

राजा के पास गया और बोला- "हुजूर! यह तो सचमुच मूर्खों का सरदार है।" राजा सिपाहियों के साथ आगे बढ़ चला। थोड़ी दूर जाने पर उसे एक आदमी किवाड़ के पल्ले सिर पर उठाए जाता दिखाई पड़ा। "अबे ! ठहर, किवाड़ के ये पल्ले कहाँ लिए जा रहा है ?" राजा ने पूछा। "मैं ससुराल जा रहा हूँ। मेरी गैर-हाज़िरी में कोई मेरा घर-बार लूट न ले जाय; इस डर से किवाड़ खोल कर अपने साथ ले जा रहा हूँ।" उस आदमी ने जवाब दिया।

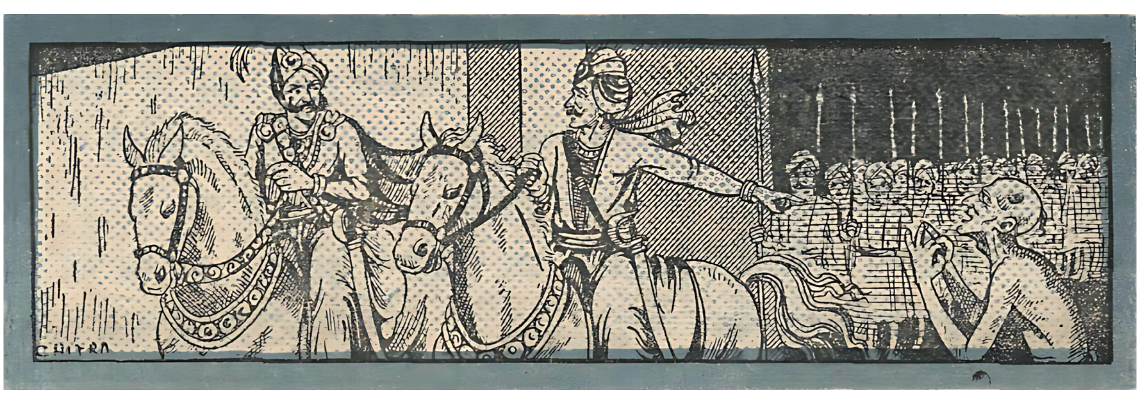
"अरे! तू तो उल्लू का पट्ठा जान पड़ता है। चोरों के डर से तो लोग अपने माल-असबाब साथ ले जाते हैं। किवाड़ खोल कर कौन ले जाएगा ?" राजा कहने लगा। इस पर सेनापति ने कहा-"हुजूर ! इस शहर में तो सभी जगह पागल ही पागल नज़र आते हैं।"

थोड़ी दूर जाने के बाद उन्हें एक अन्धा दादा दिखाई दिया जो उँगलियों पर कुछ गिन रहा था। "क्यों भई ! क्या गिन रहे हो ?" राजा ने पूछा।

"गिन रहा हूँ कि इस शहर में कितने बुद्धिमान हैं !"अन्धे ने जवाब दिया।

"इस शहर में तो कोई बुद्धिमान नहीं। सभी पागल हैं। मालूम होता है, यहाँ रहने पर हमारी भी अक्ल मारी जाएगी।" राजा ने कहा। "जी हुजूर ! ऐसे पागलों को सज़ा देने से क्या लाभ होगा ?" सेनापति ने जवाब दिया।

"हाँ; और इन पागलों के पास धरा क्या होगा ? चलो, हम जल्दी यहाँ से निकल जाएँ। नहीं तो यहाँ की हवा हमें भी पागल बना देगी !" यह कह कर राजा तुरन्त सेना-सहित नगर से बाहर हो गया। चतुर नगरी के लोग अन्धे-दादा की सलाह से बाल-बाल बच गए।





जब राक्षस ने उदय को खोजने और अञ्जन-भस्म वगैरह लाने के लिए निशीथ को जाने की इजाज़त दे दी तो उसने उसे भी उसी तरह गूँगा बना कर छोड़ दिया जिस तरह कि उसने राजकुमारियों को इसके पहले गूँगी बना कर छोड़ दिया था।

निशीथ जाते-जाते अन्त में मालव देश पहुँचा। उसका और उदय का रूप-रङ्ग बहुत कुछ मिलता-जुलता था और किसी तरह का अन्तर न था। इसलिए वहाँ के लोगों ने उसे देखते ही उदय समझ लिया और बड़ी खातिर के साथ राजा के पास ले गए।

प्रताप ने भी उसे देख कर उदय ही समझ लिया। उसने सोचा कि इसको उसके अञ्जन-भस्म वगैरह चुरा लेने की बात मालूम हो गई है। उसे डर भी लगा कि यह बदला लेने के ख्याल से ही वापस आया है। फिर भी उसने अनजान-सा चेहरा बना कर पूछा-"क्यों भई ! तुम जिस काम से गए थे, वह पूरा हो गया कि नहीं ?"

निशीथ की समझ में न आया कि उस देश के राजा और प्रजा दोनों उसकी क्यों इस तरह खातिर कर रहे हैं ! क्योंकि जहाँ तक उसे मालूम था, वह पहले कभी इधर



नहीं आया था। वह उनको समझाना चाहता था कि वे सब बड़ी भूल कर रहे हैं; वह कोई और ही है। लेकिन गूँगा जो था। आखिर उसने इशारे से राजा को समझाया कि वह गूँगा है !

राजा को बहुत अचरज हुआ। उसने कहा-"यह क्या उदय ! पिछली बार जब तुम आए थे, तब तुम गूँगे नहीं थे। तुम्हें इस बीच में यह गूँगापन कहाँ से आ गया ?"

राजा ने ज्यों ही उदय का नाम लिया त्यों ही सारा किस्सा निशीथ की समझ में मैं आ गया। उसने इशारे से समझाया कि कागज़-कलम मँगाओ!

उनके आते ही उसने कागज पर लिख कर समझाया कि वह उदय नहीं है, लेकिन उदय का भाई है; उदय को खोजने के लिए ही वह निकला है और उदय का पता किसी तरह मालूम होने से उसे बड़ी खुशी होगी।

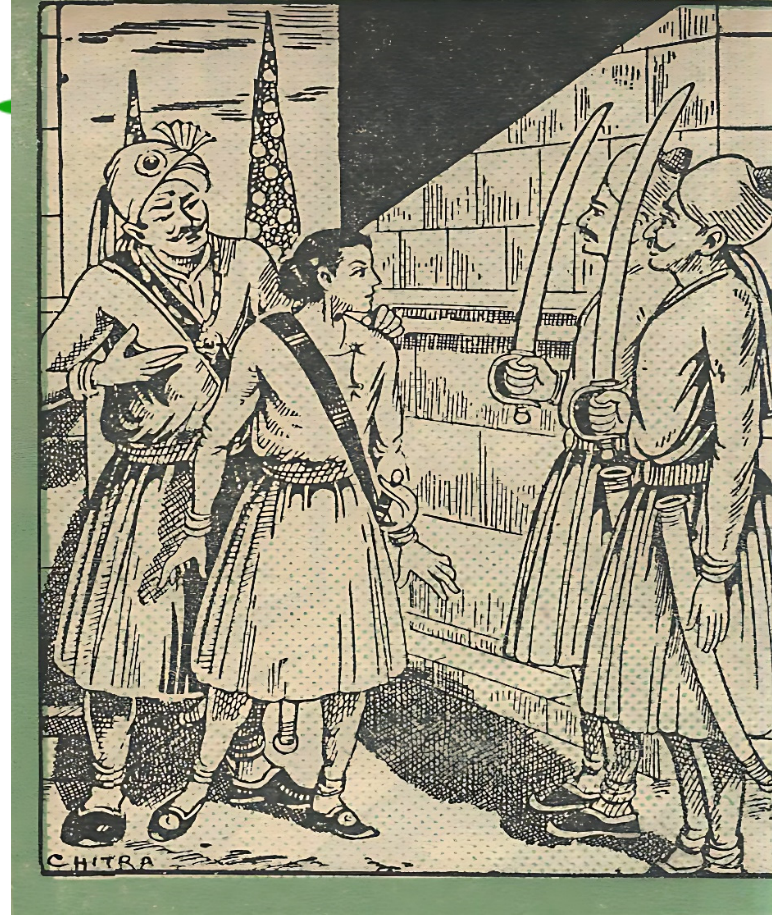
तब सारा किस्सा राजा की समझ में आ गया। अब उसे डर लगने लगा कि कहीं उसका भेद न खुल जाए ! सारांश यह कि राजा की हालत साँप और छछुन्दर की सी हो गई। उसने सोचा-"मैंने किसी तरह उदय को चकमा देकर उसके अञ्जन-भस्म वगैरह चुरा लिए और उससे पिण्ड छुड़ा लिया ! लेकिन अब यह आ धमका ! अगर मैं इसे उदय की बातें बता दूँगा तो पीछे मेरी ही जान पर आ बनेगी !"

इतना ही नहीं; उस राजा के मन में और एक बुरा ख्याल भी उठा। उसने सोचा-"अब तक तो राक्षस ने उदय को पकड़ ही लिया होगा और मार भी डाला होगा। अब मैं इसे भी किसी तरह मार डालूँगा तो बच रहेगा तीसरा भाई। वह भी कभी न कभी मेरे चंगुल में फँसेगा ही। इन तीनों के मरने

पर राजकुमारियाँ लाचार हो जाएँगी और मुझ से ब्याह कर लेंगी।" यह सोच कर उसने निशीथ से कहा-"भैया ! यह तो सच है कि तुम्हारा भाई यहाँ आया था। लेकिन यहाँ एक ही दिन रहा। दूसरे दिन उठ कर वह कहाँ चला गया, किसी को मालूम नहीं। लेकिन इस विषय में मैं तुम्हारी एक मदद कर सकता हूँ। उदय को खोजने में सहायता देने के लिए मैं अपने दो नौकर तुम्हारे साथ कर दूँगा। वे तुम्हारे साथ रहेगे और उसको खोजने में तुम्हारी सहायता करेंगे।"

यह सुन कर निशीथ ने कृतज्ञता सूचित करने के लिए अपना सिर हिलाया और राजा को प्रणाम किया। तुरन्त राजा ने उठ कर अपने मन्त्री को बुलाया और चुपके से कहा-"इसके साथ अपने दो सिपाहियों को भेजो। उनको आज्ञा दो कि नगर से बाहर पहुँचते ही चालाकी से इसे मार डालें। किसी को कानों-कान खबर तक न हो।"

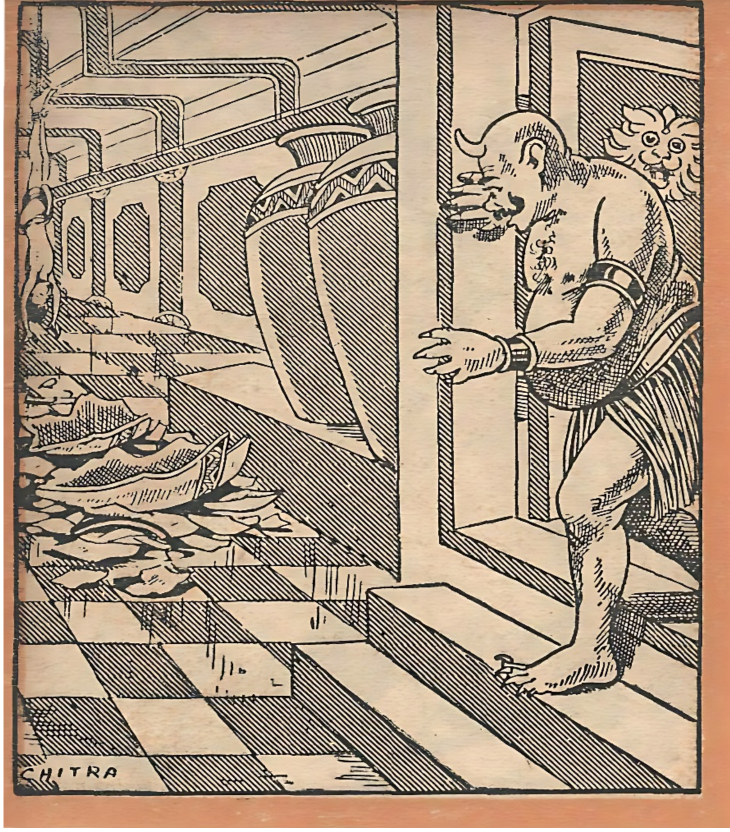
मन्त्री यह सुन कर स्तब्ध रह गया। लेकिन राजा का हुक्म टालने पर खुद उसी का सिर उड़ जाता। इसलिए उसने दो सिपाहियों को



बुलाया और राजा का हुक्म सुना दिया। दोनों सिपाही निशीथ के साथ हो गए।

* * * * * *

उधर उदय का हाल सुनो। राक्षस के लौट आने में सिर्फ दो दिन बाकी थे। उसके आते ही सारा भण्डा फूट जाता। इसलिए उदय भारी सोच में पड़ गया। आखिर दाढ़ी वाले से सलाह लेने पर उसने कहा-"मुझे फिर पहले की तरह लटका दो। तुम कमरे के किसी कोने में छिप जाओ। राक्षस के आने के बाद तुम चुपके से बाहर खिसक जाओ। बाहर जाकर तुम यथा-



प्रकार पहरेदारों में मिल जाना और पूछ-ताछ करके जान लेना कि तुम्हारे दोनों भाई कहाँ हैं। इस समय तो इसके अलावा और कुछ नहीं किया जा सकता।"

"लेकिन अगर वह आते ही सोचने लगे कि तीसरी हाँडी का क्या हुआ तो ?" उदय ने उससे पूछा।

"इसका भी एक उपाय है। हाँडी के टुकड़े लाकर फिर इसी जगह बिखेर देंगे !" दाढ़ी वाले ने कहा।

वैसा ही किया भी। हाँडी के टुकड़े यथा-स्थान पहुँच गए। राक्षस के आने के एक दिन पहले ही उदय ने दाढ़ी वाले को पहले की तरह लटका दिया और खुद कमरे के एक कोने में जाकर छिप गया।

दूसरे दिन समय पर राक्षस ने आकर कमरे का दरवाज़ा खोला और तुरन्त उसकी नज़र हाँडी के टुकड़ों पर पड़ गई।

"किस बदमाश ने यह काम किया है?" यह कह कर गरजते हुए वह दाढ़ी वाले के पास आया।

दाढ़ी वाले ने बेधड़क जवाब दिया- "मैंने ! जब लटकते-लटकते जी ऊब गया तो मैं झूलने लगा। झूलते-झूलते इतनी दूर पहुँचा कि जाकर उस हाँडी से टकराया। बस, हाँडी टुकड़े-टुकड़े हो गई। गलती माफ कीजिए !"

"अच्छा ! जा ! जा !" राक्षस ने झुञ्झला कर कहा। इधर इन की बातें हो रहीं थी; उधर उदय चुपके से खिसक गया। बाहर जाकर वह पहरेदारों के झुण्ड में मिल गया और उनके साथ सरोवर के किनारे चला गया।

बातों के सिलसिले में उसे यह मालूम हो गया कि राक्षस ने निशीथ को उसी की खोज में भेजा है; लेकिन प्रदोष अभी सरोवर में ही है। यह खबर मालूम होते ही उदय

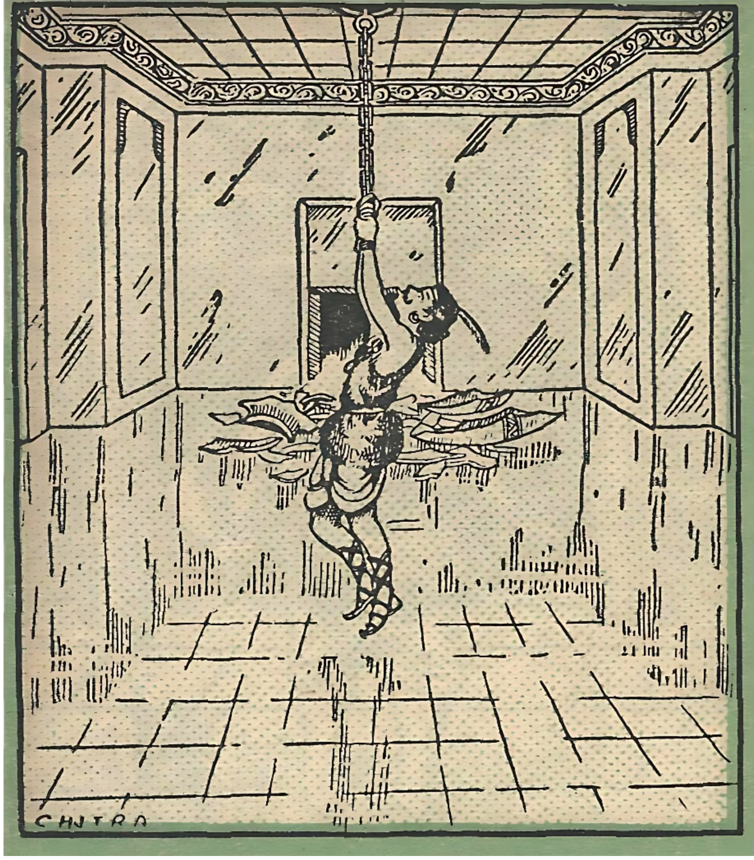
बड़ी चिन्ता में पड़ गया। निशीथ उसे खोजते खोजते, न जाने कहाँ-कहाँ भटकता फिरेगा? बेचारा न जाने कितनी मुसीबत में पड़ेगा ? तुरन्त उसने सोचा कि किसी न किसी तरह निशीथ से जा मिलना चाहिए। लेकिन यह कैसे मुमकिन था ? आखिर उसने सोचा कि दाढ़ी वाला ही इसके लिए कोई न कोई रास्ता बता सकता है।

इसलिए साँझ को पहरे से छूटते ही वह दौड़ कर उस कमरे की तरफ गया जिसमें दाढ़ी वाला बन्दी था। लेकिन वहाँ जाकर जो देखा तो उसे बड़ा आश्चर्य हुआ। क्योंकि कमरा खुला हुआ था और दाढ़ी वाले का कहीं पता न था। हाँ, रस्सी छत से लटक रही थी।

यह दृश्य देख कर उदय को बहुत निराशा हुई। उसने सोचा-"दाढ़ी वाले से मैंने बहुत उम्मीद की थी। लेकिन वही गायब है। यह सब देखने से मालूम होता है कि दाढ़ी वाले को राक्षस कहीं ले गया है। कहीं उसे मार तो नहीं डालेगा ? नहीं, वह कभी ऐसा नहीं करेगा। दाढ़ी वाला ज़रूर उसे किसी न किसी तरह चकमा दे देगा। मुमकिन है, उसे और किसी कमरे में बन्द कर दिया हो !" यह सोच कर वह एक-एक करके सभी कमरों में दाढ़ी वाले को खोजने लगा।



इस तरह खोजते वक्त उदय का पाँव अचानक एक बटन पर पड़ गया। तुरन्त सामने की दीवार के दो टुकड़े हो गए और आगे जाने के लिए रास्ता निकल आया। उदय ने कदम आगे बढ़ाया। लेकिन सिर उठाते ही वह भौंचक्का खड़ा रह गया। क्योंकि सामने एक सुनहरा दरवाज़ा था। उसमें तीन भयङ्कर साँप लिपटे हुए थे जो फन उठा कर फुफकार रहे थे। हो सकता है कि दाढ़ी वाला उसी के अन्दर हो !



लेकिन वह अन्दर जाए तो कैसे ? खड़ा खड़ा वह दिमाग लड़ाने लगा। आखिर उसे एक उपाय सूझ गया।

वह उस कमरे में गया जिसमें पहले दाढ़ी वाला था और धीरे धीरे एक हाँडी लुढ़का ले आया। दरवाज़े के नज़दीक आने पर वह खुद हाँडी में बैठ गया और एक झटके के साथ लुढ़कते हुए दरवाज़े के अन्दर चला गया। भीतर जाकर उसने झाँक कर देखा। कोई खतरा नज़र न आया। धीरे धीरे हाँडी से बाहर आया।

बाहर आकर जो देखा तो उदय की आँखें चौंधिया गई। उस कमरे की दीवारें और फर्श सब कुछ सोने के बने थे। अचरज से मुँह बाए वह चारों ओर नज़र दौड़ाने लगा। तब कहीं उसे याद आया कि वह अन्दर क्यों आया था। फिर कोने-कोने में वह दाढ़ी वाले की तलाश करने लगा। लेकिन कहीं उसका पता न चला। आखिर इसी तरह भटकते भटकते उसका पैर और एक बटन पर पड़ गया।

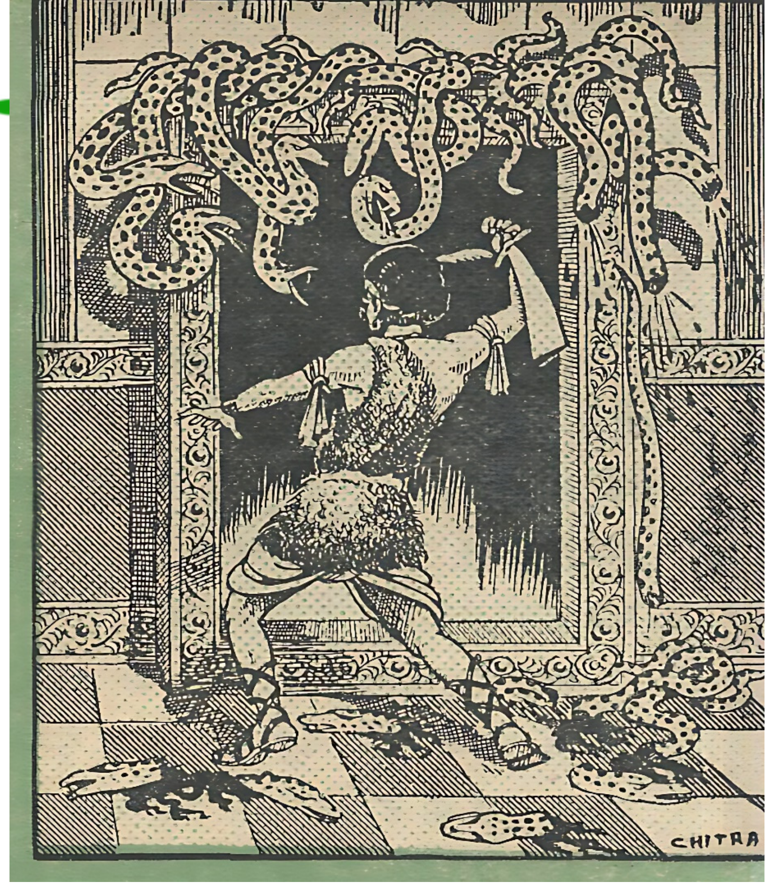
पल में सामने की दीवार हट गई और एक राह निकल आई। "इस बार भी ज़रूर कोई न कोई गुल खिलेगा !" यह सोच कर उदय धीरे धीरे पैर बढ़ाने लगा।

कुछ कदम जाते ही सामने उसे एक बड़ा दरवाजा दिखाई दिया जो चाँदी का बना हुआ था। इसके ऊपर छः साँप लटक रहे थे। उदय ने सोचा- "यह भी अच्छा रहा ! इस बार भी वह हाँडी में बैठ गया और लुढ़कते हुए आसानी से अन्दर चला गया।

लेकिन उसके दौर्भाग्य से इस बार हाँडी अन्दर जाकर दीवार से टकरा गई और टुकड़े टुकड़े हो गई। उदय ने खड़े होकर देखा तो सारा कमरा चाँदी का बना हुआ था।

अब वह माथा खुजलाने लगा कि आगे कैसे बढ़ा जाए। अब की उसे कहीं कोई बटन न दिखाई दिया। लेकिन हाँ, कमरे की छत से एक चाँदी की जञ्जीर लटक रही थी। उदय ने उछल कर उसे पकड़ लिया और ज़ोर से खींचा। बस, दीवार ऊपर उठ गई और जाने के लिए राह बन गई। उदय आगे बढ़ता गया। इस बार भी सामने उसे एक बड़ा दरवाज़ा दिखाई दिया। वह हीरे-जवाहरों से जड़ा हुआ था। उसके ऊपर बारह भयङ्कर साँप लटक रहे थे।

उदय हाँडी में बैठ कर लुढ़कते हुए किसी तरह दो दरवाज़े पार हो गया था। लेकिन हाँडी तो अब फूट गई थी। अब वह क्या करे ? न जाने, इसी तरह और कितने दरवाज़े उसे पार करने होंगे और कितने खतरों का सामना करना होगा। बेचारा पीछे लौट भी नहीं सकता था। क्योंकि दोनों दरवाज़ों पर साँप फुफकार रहे थे। आगे बढ़ना भी एकदम नामुमकिन हो रहा था। उस हीरे-जवाहरात जड़े दरवाज़े पर एक-दो नहीं, बारह साँप पैंतरे बदल रहे थे। बेचारा अब क्या करता ?



उदय उस कमरे की रत्न जड़ी ज़मीन पर बैठ कर उधेड़-बुन करने लगा कि कैसे इस सङ्कट से निकले ? लेकिन बहुत कुछ सोचने पर भी उसे कोई किनारा न दीख पड़ा। एक ही बात खुली थी। वह यह थी कि वह उन साँपों से निपट कर मौत का सामना करे। उसे किसी न किसी तरह उन साँपों को मार ही डालना था।

आखिर उदय ने किसी तरह जान हथेली पर लेकर तलवार निकाली और उन साँपों पर हमला किया। बस, एक ही बार में छः साँपों के सिर कट कर नीचे गिर पड़े। दूसरे वार में पाँच और साँपों के सिर कट गिरे।

अब और एक ही साँप बच रहा था। उसे मार डालने पर उदय आसानी से अन्दर जा सकता। उदय ने सावधानी से वार किया। लेकिन साँप ने सिर हटा लिया और बिजली की तरह उचक कर उदय के हाथ में डस लिया। बस, उदय के हाथ से तलवार छूट कर झनझनाती हुई नीचे गिर पड़ी !

उदय पर साँप के ज़हर का असर होने लगा। उसके सारे बदन से पसीना छूटने लगा। ज़रा भी देर करने से जान जाने का डर था। इसलिए उसने झट दूसरे हाथ से तलवार उठा ली और अपना वह हाथ काट डाला। और एक वार करके उसने साँप का भी काम तमाम कर डाला। लेकिन दूसरे ही क्षण वह बेहोश होकर नीचे गिर पड़ा।

पता न था कि वह यों कितनी देर बेहोश पड़ा रहा। जब होश में आया तो देखा कि कटे हुए हाथ से खून अब भी बह रहा है। सारा फर्श खून से तर हो गया है। वह धीरे-धीरे उठ कर, पीड़ा से कराहते हुए आगे बढ़ने लगा।

थोड़ी दूर जाने पर उसे एक बड़ी गुफा दिखाई दी। उसी में देवी काली की मूर्ति थी जिस की पूजा राक्षस किया करता था। देवी के गले में एक सौ मुण्डों की माला थी। उनके मुँह से आग की भयङ्कर लपटें निकल रही थीं। उनकी आँखों से तीव्र प्रकाश निकल रहा था। देवी हाथ फैलाए थीं। हथेली पर एक गीध बैठा हुआ था। देवी की मूर्ति को और उस गुफा के वातावरण को देखते ही डर लगता था।

फिर भी उदय विचलित नहीं हुआ। वह वैसे ही आगे बढ़ता गया। लेकिन चार कदम जाते ही देवी के भाल से घना धुँआ निकलने लगा और सारी गुफा में छा गया। इस धुएँ के कुहरे में उदय का दम घुटने लगा।

[अभी और है]





एक जङ्गल के नज़दीक एक कुटिया में दस बरस का एक लड़का रहा करता था। बचपन से ही जङ्गल में रहने पर भी देवी सरखती की कृपा से उसने सब तरह की विद्याएँ सीख ली थीं।

वह अनेक तरह का जादू-टोना भी जानता था। इतना ही नहीं, वह जङ्गल के जानवरों और पञ्छियों की बोलियाँ भी समझ लेता था। इसके अलावा अनेक कलाओं में कुशल था। लेकिन इन सब विद्याओं के द्वारा वह दूसरों की भलाई ही करता था, बुराई नहीं। इसी से सब लोग उस लड़के को "बाल-योगी" कह कर पुकारते थे।

एक दिन की बात है। दोपहर का समय था और धूप बड़ी तेज़ थी। पेड़ की छाँह में बैठे-बैठे बाल-योगी को झपकी सी आने लगी। वह लेट गया और गाढ़ी नींद में चला गया। एकाएक किसी के चीखने की आवाज़ सुनाई पड़ी और उसकी नींद टूट गई। उसने उठ कर चारों ओर नज़र दौड़ाई और देखा कि एक औरत बेतहाशा उसकी ओर दौड़ी आ रही है। "बचाओ! बचाओ!" वह बेचारी चिल्ला रही थी।

यह देखते ही बाल-योगी उठा और उस औरत की तरफ दौड़ा। औरत बाल-योगी को आते देख कर ठिठक गई और काँपती हुई, दीन नेत्रों से उसकी तरफ देखने लगी।

"वह मुझे पकड़ने आ रही है ! कहीं छिपा दो मुझे ! बचा लो !" यह कह कर वह औरत आँचल में मुँह छिपा कर फूट-फूट कर रोने लगी।

"वह है कौन ? क्यों तुम्हारा पीछा कर रही है ?" बालयोगी ने पूछा।

"मेरी जान बचाओ ! सुनो, काञ्चन देश के राजकुमार जीवसेन ने एक यक्ष-कन्या से ब्याह करने का विचार किया था। पीछे

रामचन्दर



वह मुझ पर मोहित हो गया। इस से वह यक्षकन्या मुझ से द्वेष करने लग गई। वही अब मेरा पीछा कर रही है। वह सब कुछ कर सकती है। मैं उसी के डर से इस तरह भाग रही हूँ।" उस युवती ने जवाब दिया।

"तो क्या तुम जीवसेन से ब्याह करना चाहती हो ?" बाल-योगी ने पूछा।

"नहीं, वह तो बहुत बदसूरत है। उस से कोई औरत ब्याह करना नहीं चाहेगी। यक्षकन्या भी उससे प्रेम नहीं करती। लेकिन वह राजकुमार बड़ा धनवान है। इसी से यक्षकन्या उसे छोड़ना नहीं चाहती।"

इतना कह कर वह युवती गिड़गिड़ाने लगी-"देर न करो ! मुझे किसी तरह कहीं छिपा दो ! नहीं तो वह मुझे खा ही जाएगी !"

बाल-योगी को उस पर तरस आ गया। वह झट उसे अपनी कुटिया में ले गया और मन्त्र-जल हाथ में लेकर, मन्त्र पढ़ कर उस पर छिड़क दिया। आश्चर्य ! वह युवती एक सुन्दर मधु मक्खी बन गई और गुञ्जार करती हुई, फूलों पर बैठ कर मकरन्द पीने लगी।

यह देख कर बाल-योगी ने सोचा- "ठीक है ! यह यहीं कहीं उड़ती रहेगी और इन फूल-पौधों के ऊपर विहार करती हुई, अपने दिन निश्चिन्त होकर सुख से काट लेगी।"

इतने में झमकती चमकती वह यक्षकन्या भी वहाँ आ खड़ी हुई। "इधर से किसी औरत को जाते देखा है तुमने ?" उसने गरज कर बाल-योगी से पूछा।

"नहीं तो !" बाल-योगी ने जवाब दिया। "देखो, झूठ बोलोगे तो खैर नहीं; बताओ, उसे कहाँ छिपा रखा है ?" उस यक्षकन्या ने धमकाते हुए पूछा।

"मुझे क्या मालूम ? मैंने किसी को नहीं देखा है।" बाल-योगी साफ झूठ बोल गया।

इतने में एक मधुमक्खी उड़ती-उड़ती वहाँ आई और यक्षकन्या की नाक पर बैठ गई। इतना ही नहीं; उसने उसे ज़ोर से काट भी लिया। यक्षकन्या को उस मधु- मक्खी पर बहुत क्रोध आया। उसने कहा- "देखना, मैं तुझे कैसा मज़ा चखाती हूँ ?" यह कह कर वह क्रोध से वहाँ से चली गई।



उसके बाद मधु-मक्खी उड़ी और धीरे- धीरे बाल योगी की कुटिया में घुसी। वहाँ एक कमरे में एक मेज़ पर कलम-दावात रखी हुई थीं। उसने सीधे जाकर दावात में अपने पैर डुबोए। फिर उसने मेज़ पर रखे हुए सफेद कागज़ पर कुछ टेढ़ी-मेढ़ी लकीरें खींच दीं। बाल-योगी की नज़र उन लकीरों पर पड़ी।

लकीरें साफ कह रही थीं-"मैं आपको अपना एहसान जताती हूँ।" बस, इतना लिख कर मधुमक्खी उड़ गई, जैसे उसने अपना कर्तव्य पूरा कर लिया हो और जङ्गल के हरेक फूल पर मँडराती हुई गुञ्जार करने लगी।

उधर यक्षकन्या जो गुस्सा होकर गई थी, चुप नहीं बैठी रही। उसने अपने मित्र बर्रों को बुला कर कहा-"एक सुन्दर मधु-मक्खी इस जङ्गल में मँडराती फिरती है। उसे किसी न किसी तरह पकड़ना है। जाओ, जङ्गल में जितनी मकड़ियाँ हैं, सबसे जाकर कह दो कि वे अपने-अपने जाल फैला दें और उसे पकड़ने की कोशिश करें।"

बस, यह सुनते ही बर्रें उड़े और जङ्गल में जितनी मकड़ियाँ थीं, सब को जाकर यक्ष-कन्या का यह हुक्म सुना दिया।

कुछ देर बाद मधु-मक्खी मँडराती हुई आकर एक सुन्दर फूल पर बैठी। वहीं एक

मकड़ी रेशमी तारों से अपना मोहक जाला बुन रही थी। मधु मक्खी को देखते ही उसने अनेक प्रकार से उसकी प्रशंसा की और मीठी-मीठी बातें बना कर उससे कहा-"चलो ! मैं तुम्हें अपना घर दिखा दूँ। जानती हो, कितना सुन्दर है मेरा घर ! उसे देख कर तुम तुरन्त लुभा जाओगी !" भोली-भाली मधुमक्खी मकड़ी की बातों से फूल गई और उसके जाले में जाकर फँस गई। महीन तारों में उसके पंख और पैर जकड़ गए। बेचारी को हिलने-डुलने की गुञ्जाइश भी न रही।

यक्षकन्या के चले जाने के बाद बाल-योगी उस मधु मक्खी की खोज में निकला। लेकिन मधु मक्खी उसे कहीं दिखाई नहीं दी। वह फल-फूल पर, पात-पात पर उसे ढूँढता चला। आखिर उसने हर मकड़ी के जाले में झाँकना शुरू किया। अन्त में उसे वह एक जाले में फँसी हुई दिखाई दी। उसे जिन्दा देख कर उसे बहुत आनन्द हुआ। साथ ही उस मकड़ी के जाले पर बहुत क्रोध भी आया।

उसने अपनी उँगली से उस जाले को छिन्न-भिन्न कर दिया। फिर उसने मधु-मक्खी को हाथ में लेकर मन्त्र पढ़ा। बस, तुरन्त वह एक युवती का रूप धारण कर आनन्द से उड़ गई।

बाल-योगी को यह देख कर बहुत आश्चर्य हुआ। उसके जादू में कहीं कोई गलती हो गई थी, जिससे पंख वैसे ही बने रह गए और युवती उड़ गई। लेकिन उस सुन्दरी ने उड़ते-उड़ते उसकी ओर ऐसी मुसकान फेंकी कि वह उसके हृदय-पटल पर अङ्कित सी हो गई। बालयोगी अनमने भाव से अपनी कुटिया में वापस आया। अन्दर जाने के बाद जब उसने कागज पर की लकीरें देखी तो उसकी आँखों से अचानक आँसू की गङ्गा बह निकली। घाव हरा हो आया। उसकी मधुमक्खी एहसान जताए बगैर नहीं गई थी।





राजू एक गरीब लड़का था। दस साल की उमर में ही वह अनाथ हो गया था। कोई रिश्तेदार भी नहीं था जो उसे पढ़ाता-लिखाता। इसलिए वह एक किसान के यहाँ नौकर हो गया और चरवाहे का काम करके अपना पेट पालने लगा।

वह किसान हमेशा उसे डाँटता रहता था। उसके बाल-बच्चे भी नहीं थे और दूसरों के बच्चों को भी वह प्यार नहीं करता था। जैसे ही कोई बच्चा उसके सामने आता, पति-पत्नी दोनों उसे झिड़क देते थे। राजू अभी छोटा ही था और अनाथ होने के कारण किसी से कुछ शिकायत भी नहीं कर सकता था। इसलिए वह उनकी डाँट-डपट का शिकार होने लगा।

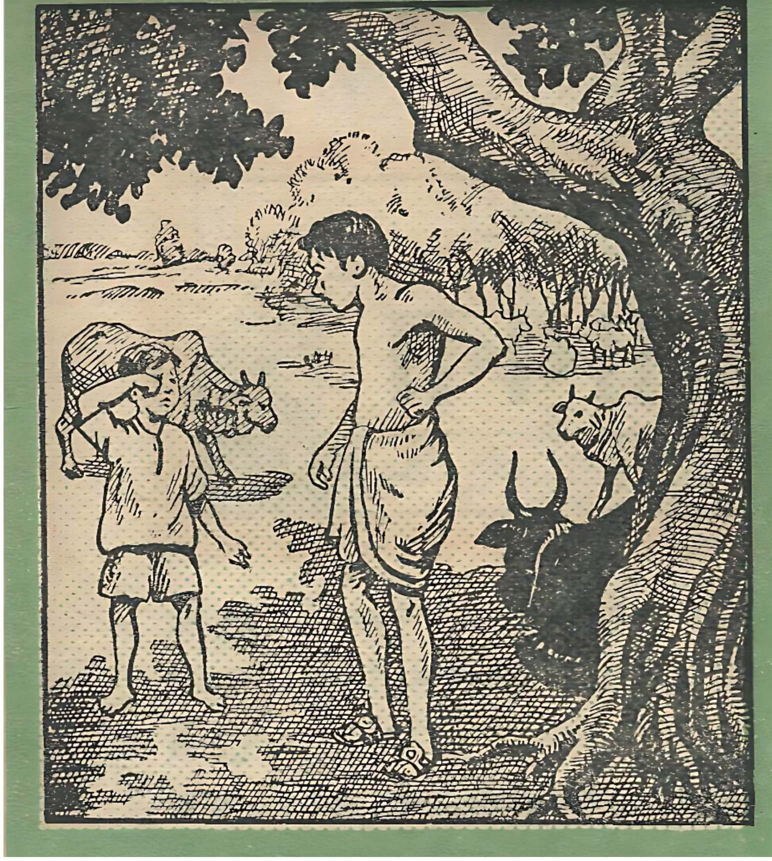
गरमी के दिन थे। कड़ी धूप के धरती तवे की तरह जल रही थी। पौधों और पशु-पक्षियों के साथ आदमी भी झुलसे जा रहे थे। ऐसे समय भी राजू को गाँव के बाहर जाकर चरवाही करनी पड़ती थी। नदी किनारे घने पेड़ों के झुरमुट में ढोरों को हाँक कर, राजू एक पेड़ की साया में लेट गया और अपने जीवन के बारे में सोच-विचार करने लगा।

सबेरे के कलेवे के बाद उसने अब तक कुछ नहीं खाया था। ज्यों-ज्यों धूप तेज़ होती गई, राजू के पेट की आग भी बढ़ती गई।

राजू ने एक लम्बी साँस भरी ! क्या उसकी मुसीबतों का कहीं अन्त न था ? चाहे जितनी मेहनत करो, गालियाँ खाओ, मार खाओ, पेट भरता न था। कोई उपाय नज़र नहीं आता था।

थोड़ी देर बाद राजू उठ बैठा। गायों ने चरना छोड़ दिया था। पेड़ की छाँह में खड़ी गरमी के मारे हाँफ रही थीं। इधर

गेन्दा सिंह



भूख के मारे बेहाल राजू की आँखों के सामने अन्धेरा छाता जा रहा था। आखिर वह आँखें मूँद कर लेट गया। लेकिन उस का सर चकराने लगा। थोड़ी देर बाद उसने आँखें खोलीं तो देखता क्या है कि चप्पलों की एक सुन्दर जोड़ी थोड़ी दूर पर पड़ी है। वह अचरज से उसी ओर देखने लगा।

फिर काँपते हुए हाथों से उसने चप्पल उठाए और पैरों में पहन लिए। चप्पल पहनते ही उसके शरीर में एक ऐसा परिवर्तन सा मालूम हुआ कि वह एकदम आश्चर्य में पड़ गया। पेट की आग जो भट्ठी की तरह धधक रही थी, बिल्कुल बुझ गई थी। सर का चकराना भी गायब था। सारे बदन में एक विचित्र फुर्ती सी महसूस होने लगी थी।

"वाह ! वाह ! यह कैसा आश्चर्य है ?" कह कर राजू उछलने-कूदने लगा। भूख-प्यास से छुटकारा पाते ही उसके मन में आत्म-विश्वास पैदा हुआ। उसने सोचा-"अब घबराने की कोई बात नहीं। अब मैं कभी हार नहीं मान बैठूँगा।"

लेकिन बेचारा राजू बड़ा अभागा था। वह खुशी से फूला न समा रहा था कि अचानक किसी के रोने की आवाज़ सुनाई पड़ी। उसने उस ओर फिर कर देखा कि कौन रो रहा है?

छः सात साल का एक लड़का रोते हुए उसी की ओर आ रहा था। "क्यों रो रहे हो बाबू ?" राजू ने लड़के को पुचकार कर पूछा।

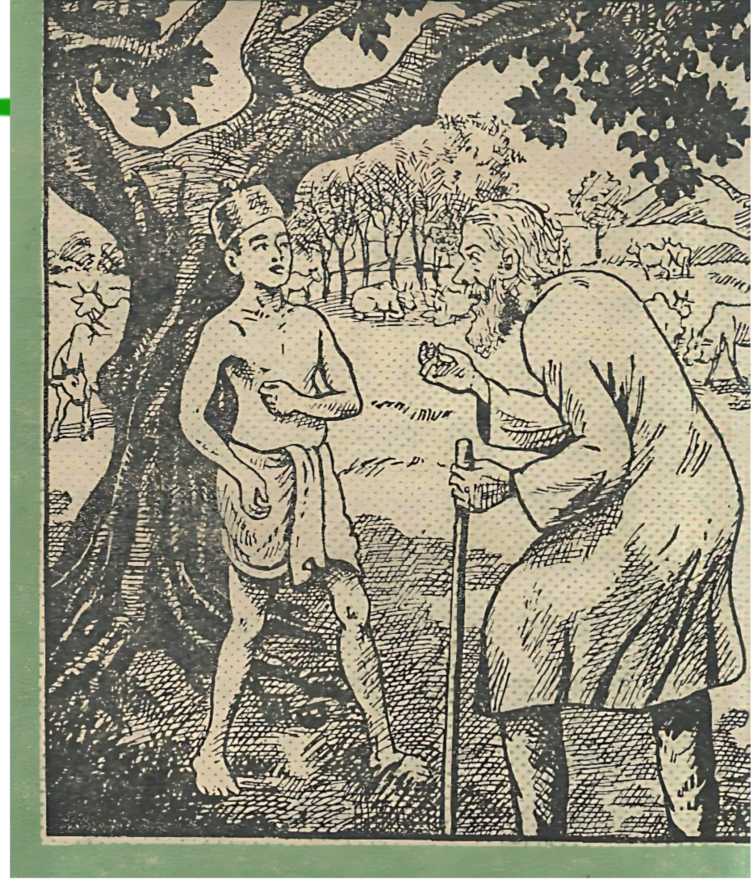
"वे चप्पल मेरे हैं। सबेरे यहाँ भूल कर चला गया था।" लड़का सिसकते-सिसकते बोला।

राजू को लड़के पर दया आ गई। चप्पल से उसे बहुत सुख हो रहा था।

उसकी भूख-प्यास जाती रही थी। फिर भी चप्पल उसके तो नहीं थे। दूसरों की चीज़ लेने का उसे क्या अधिकार था ? इसलिए राजू ने तुरन्त चप्पल निकाल कर लड़के को दे दिए। लड़का चप्पल पहन कर खुशी-खुशी घर चला गया।

तुरन्त राजू की तकलीफ पहले से भी बढ़ने लगी। भूख पहले से भी ज्यादा तेज़ हो गई। वह सिर धुनने लगा और हसरत से उस ओर नज़र दौड़ाने लगा, जिस ओर लड़का खुशी-खुशी गया था।

दूसरे दिन भी ठीक समय पर राजू उसी जगह ढोरों को ले आया। उस दिन भी धूप बड़ी तेज़ थी और लू चल रही थी। राजू बहुत थका-माँदा था। पेड़ के नीचे लेट गया और चारों ओर नज़र दौड़ाने लगा। मन के एक कोने में कहीं एक उम्मीद छिपी बैठी थी कि कल की तरह आज भी कोई चीज़ दीख जाए। इतने में नदी के किनारे एक बवण्डर उठा और सूखे पत्ते और तरह तरह के कूड़े-कचरे बटोर कर आकाश की ओर बढ़ा। चक्कर काट-काट कर वह पेड़ों के झुरमुट पर आ उतरा। राजु ने धूल के डर से आँखें मूँद लीं।



थोड़ी देर बाद जब बवण्डर शान्त हो गया और उसने आँखें खोलीं तो देखा कि पैरों के पास एक सुन्दर टोपी पड़ी हुई है। उसने लपक कर टोपी उठा ली और सिर पर रख ली। बस, तुरन्त उसकी भूख-प्यास और सारी थकान गायब हो गई।

"वाह ! मेरी किस्मत का क्या कहना है ?" राजू ने सोचा और फूला न समाया।

लेकिन पलक झपकते ही एक बूढ़ा वहाँ आ खड़ा हुआ और कहने लगा- "बेटा ! वह टोपी मेरी है, बवण्डर में उड़ आई है।"

राजू क्षण भर हिचकिचाया कि टोपी इसे दूँ या न दूँ ? न देने पर भी वह बुढ़ा

उसका क्या बिगाड़ सकता था ? कुछ नहीं; यह उसे अच्छी तरह मालूम था। फिर भी उसके मन में ऐसी नीयत न टिक सकी। उसने तुरन्त टोपी उतार कर उस बूढ़े को लौटा दी। यह देख कर वह बूढ़ा बहुत खुश हुआ। उसने उसे दुआ देते हुए कहा-"तुम तो बड़े भले लड़के मालूम होते हो। मैं तुम्हारी तीन इच्छाएँ पूरी कर दूँगा। बोलो, क्या माँगते हो ?"

राजू बिना सोचे-विचारे झट से बोल उठा-"मुझे राजा बना दो !"

"अच्छा !" बूढ़े ने कहा।

"राजा के लिए एक महल भी चाहिए न ? इसलिए मुझे एक महल दे दो !" राजू ने कहा।

"अच्छा !" बूढ़े ने कहा।

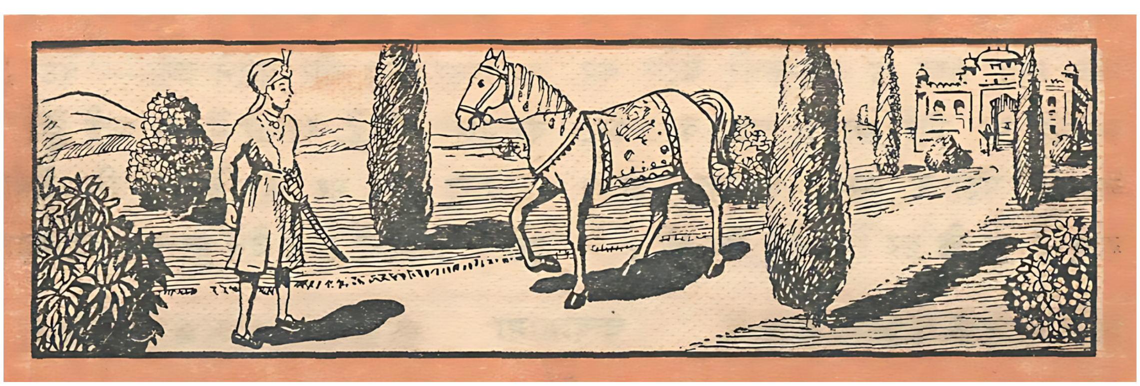
"और राजा पैदल तो नहीं चल सकता ! इसलिए मेरे वास्ते एक अच्छा-सा घोड़ा भी दे दो !" राजू ने कहा।

"तथास्तु !" बूढ़े ने कहा।

देखते-देखते राजू की तीनों इच्छाएँ पूरी हो गईं। सिर पर मुकुट पहन कर वह राजा बन गया। सामने ही उसका आलीशान महल खड़ा था। बगल में ही उसका घोड़ा खड़ा था। यह सब पल भर में ही हो गया था। लेकिन राजू ने मुड़ कर देखा तो उस बूढ़े का कहीं पता न था।

राजू खुशी-खुशी उछल कर घोड़े पर सवार हो गया और शान के साथ घोड़ा दौड़ाते हुए महल के फाटक पर जाकर खड़ा हो गया।

तुरन्त सैकड़ों नौकर-चाकर उसकी 'जय' बोलते बाहर निकल आए। वह सुख से अपने राज-महल में रहने लगा। लेकिन वह बूढ़ा तो उसे फिर कभी नहीं दिखाई दिया। लोग कहते हैं कि राजू की सचाई और उदारता ने ही उसे इस तरह राजा बना दिया।





मद्रास में करमचन्द कबीर नाम का एक हीरे-जवाहरात का व्यापारी था जिसने इस व्यापार में लाखों कमाए थे। एक दिन कबीर ने एक पत्र पाया। उसमें लिखा था-"प्रिय करमचन्द ! मैं कल सबेरे ही मद्रास आया। रङ्गनायक मुहल्ले के १२७-वें घर में ठहरा हूँ। शायद तुम्हें गुस्सा आएगा कि मैं सीधे तुम्हारे घर क्यों नहीं आया ? लेकिन मेरा काम इस मुहल्ले में था। इसलिए सीधे यहीं आकर ठहर गया। कल ही मैं तुम्हारे पास आना चाहता था। लेकिन क्या करता; बुखार आ गया। अब इधर-उधर घूम-फिर नहीं सकता। फुरसत हो तो एक बार यहाँ आ जाना !

तुम्हारा सोहन-"

वह पत्र पढ़ कर कबीर को बहुत खुशी हुई कि उसके बचपन का दोस्त सोहनलाल मद्रास आया है। बुखार की बात सुन कर उसे अफसोस भी हुआ। उसके मन में हुआ कि मित्र को अपने घर लाकर सेवा-सुश्रूषा करनी चाहिए। झट मोटर पर चढ़ कर वह चला और रङ्गनायक मुहल्ले की खोज करने लगा।

रङ्गनायक मुहल्ला एक छोटी सी गली थी। वह गली इतनी तङ्ग थी कि कबीर को सन्देह होने लगा कि मोटर उसके अन्दर जाएगी या नहीं। मद्रास में ऐसी बहुत सी तङ्ग गलियाँ हैं जिनमें दो गाड़ियाँ एक साथ नहीं जा सकतीं और सामना होने पर कतरा जाने की गुञ्जाइश भी नहीं रहती। गाड़ी को मोड़ने की भी जगह नहीं रहती। बात की बात में आना-जाना बन्द हो जाता है। इसलिए ऐसी गलियों के सिरे पर एक तख्ता टाँग दिया जाता है कि गाड़ियाँ एक ही दिशा से जा सकती हैं; दूसरी ओर से आ नहीं सकतीं।



रङ्गनायक मुहल्ले के सिरे पर भी तख्ता टँगा था कि प्रवेश करना मना है। लेकिन कबीर ने जल्दी-बाजी में नहीं देखा और गाड़ी सीधे गली में ले गया।

दरवाज़े पर के नम्बर देखते हुए वह धीरे-धीरे आगे बढ़ा और १२७-वें नम्बर वाले घर के सामने रुक गया। वहाँ गाड़ी रोक कर सीढ़ियों पर चढ़ कर, वह अन्दर चला गया।

आहट सुन कर नीले चश्मे लगाए हुए एक आदमी आगे आया और "आइए कबीर जी !" कहते, अगवानी करके अन्दर ले गया। कबीर उस आदमी के पीछे-पीछे गया और एक कुर्सी पर बैठ गया। तुरन्त वह आदमी उठ कर किवाड़ की साँकल चढ़ा आया और कबीर के सामने की कुर्सी पर बैठ गया।

"अच्छा ! सोहनलाल कहाँ है ? उसका बुखार कुछ कम हुआ कि नहीं ?" कबीर ने बड़ी उतावली के साथ अपने मित्र का हाल-चाल पूछा।

"जी! मैं ही सोहनलाल हूँ जिसे बुखार आया था और जिसे देखने आप यहाँ आए हैं !" उस आदमी ने व्यङ्ग की हँसी हँसते हुए कहा। तब कबीर को बहुत अचरज हुआ। साथ-साथ कुछ शक भी पैदा हुआ।

"लेकिन ज़रूर कुछ-न-कुछ भूल हो गई है। आप तो मेरे बचपन के दोस्त सोहन-लाल नहीं हैं ? पत्र तो उसी का लिखा हुआ था !" कबीर ने कहा।

"मैं आपके बचपन के दोस्त को अच्छी तरह जानता हूँ। उनकी लिखावट का भी मैंने अभ्यास किया है। इसी से मैं ठीक उन्हीं की सी लिखावट में आपको पत्र लिख सका।" उस नकली सोहनलाल ने जवाब दिया।

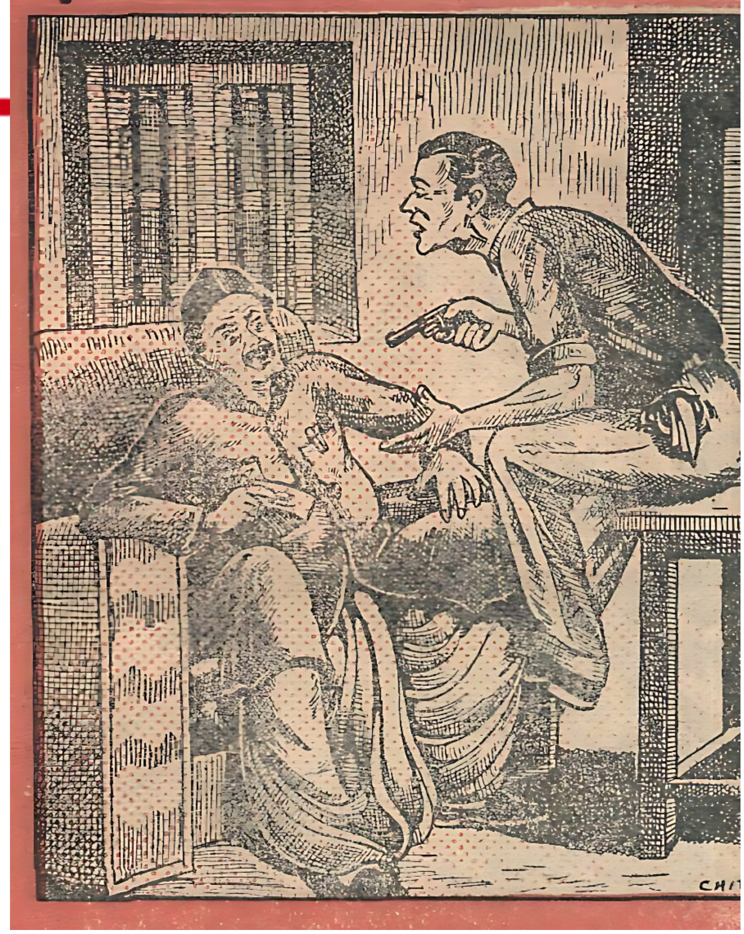
"तुमने ऐसा क्यों किया ? मुझे धोखा देकर यहाँ बुलाने में तुम्हारी मन्शा क्या है ?" कबीर ने पूछा।

"जी ! इस नगर में जितने अमीर लोग हैं सबके बारे में जानता हूँ मैं ! विश्वास रखिए कि मैंने आपको यहाँ गप-शप के लिए नहीं बुलाया। आप अभी अपने हाथ से लिख कर मुझे एक चेक देंगे। इसीलिए मैंने आपको कष्ट दिया है।" उस अजनबी ने कहा।

कबीर को बहुत गुस्सा आया। "क्या कहा ? चेक ?" कहते हुए वह कुर्सी खिसका कर उठ खड़ा हुआ।

तुरन्त सोहनलाल का रुख बदल गया। उसने पतलून की जेब से एक पिस्तौल निकाल ली और कबीर की छाती पर निशाना लगा कर कहा- "खबरदार ! चूँ भी की तो जान से हाथ धो बैठोगे !" कबीर बेचारा हड़बड़ा कर कुर्सी पर बैठ गया।

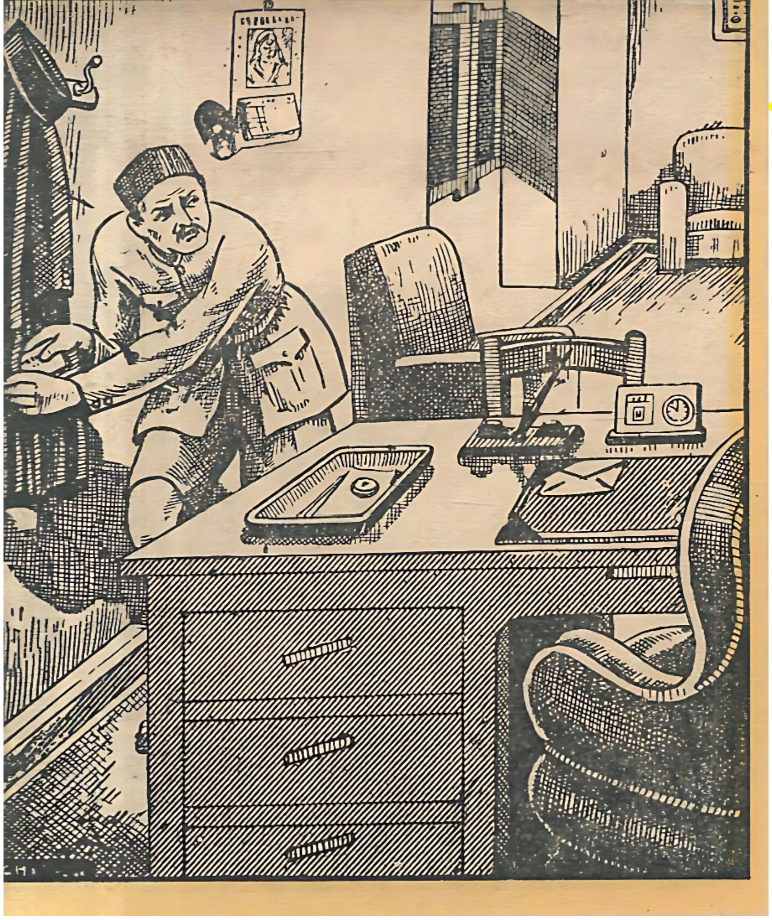
क्षण भर के लिए दोनों के मुँह से कोई बात नहीं निकली। फिर उस नकली सोहन लाल ने फिर मुसकुरा मुसकुराते हुए धीरे से कहा-"कबीर जी ! समय बर्बाद न कीजिए। जल्दी चेक काट दीजिए। थोड़ी देर में मेरा दोस्त रामसिंह आ जाएगा। वह चेक ले जाकर बैंक में भुना आएगा। उतने रुपए के नोट रखना अच्छा नहीं होगा। इसलिए अशर्फियाँ खरीद करेगा। इसमें थोड़ा समय लग ही जाएगा। क्या करें, तब तक



आप यहीं आराम कीजिएगा। अगर यहाँ से जल्दी सकुशल जाना चाहते हैं तो तुरन्त चेक काट दीजिए !"

"लेकिन मैं तो चेक-बुक अपने साथ नहीं लाया हूँ !" कबीर ने कहा।

तब नकली सोहनलाल ने फिर मुस्कुराकर कर कहा-"साहब ! आप बड़े लापरवाह आदमी हैं। खैर, मैं उतना लापरवाह नहीं हूँ। मैंने आपके दफ्तर में एक आदमी को रख छोड़ा था। उसने चेक-बुक आप के कोट की जेब में रख दी है। मैं यह भी जानता था कि आप दफ्तर में रोज़ कोट उतार कर खूँटी पर टाँग देते हैं। इसलिए



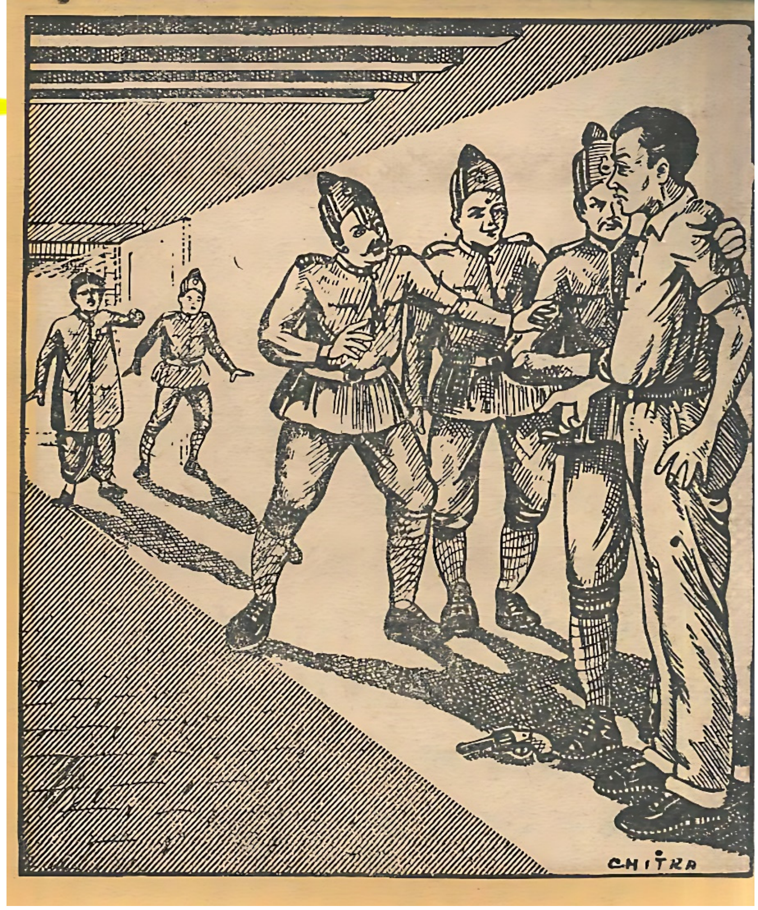
आपके दूसरे कमरे में जाते ही चेक-बुक आपकी जेब में अपने आप पहुँच गई। टटोल कर देख लीजिए न!"

घबरा कर कबीर ने अपनी जेब टटोली। चेक-बुक वहाँ मौजूद थी। लाचार होकर उसने उसे जेब से बाहर निकाला और पचास हज़ार का चेक काट कर नकली सोहनलाल को दे दिया। उसने चेक जेब में रख ली और ज़हरीली हँसी हँसते हुए कहा-"कबीर जी ! आप बड़े बुद्धिमान आदमी हैं। इसी से आपने समय खराब न किया और माँगते ही तुरन्त मुझे चेक काट कर दे दी।" इतने में किवाड़ खटखटाने की आवाज़ आई। "लो, वह रामसिंह आ ही गया। किवाड़ क्यों इतने ज़ोर से खटखटा रहा है, मालूम नहीं। शायद समझता है कि इस बीच में मैं बहरा हो गया हूँ।" यह कहते हुए नकली सोहनलालउठा और बोला- "कबीर जी ! अभी किवाड़ खोलना है। अगर मैं मुँह उधर करके किवाड़ खोलने लगूँ तो हो सकता है कि आपके मन में मेरा सिर फोड़ने या मुझे मार डालने की इच्छा हो जाए। मैं नहीं चाहता कि आप के मन में ऐसी बुरी भावना पैदा हो जाए। इसलिए अच्छा हो यदि आप ही ज़रा कष्ट करके किवाड़ खोल दें।" लाचार होकर कबीर किवाड़ खोलने चला। नकली सोहनलाल उसके पीछे-पीछे चला। उसने कहा-"किवाड़ खोलिए ! पर भागने की कोशिश न कीजिएगा। क्योंकि मैं पीछे पिस्तौल ताने चल रहा हूँ। भागने की कोशिश कीजिएगा तो ज़मीन सूँघिएगा।" यह सुन कर कबीर मन ही मन काँपने लगा। लाचार होकर डरते-डरते उसने किवाड़ खोल दिया। वह सोच रहा था कि आने वाला इस बदमाश का दोस्त रामसिंह ही

है। लेकिन किवाड़ खोलते ही देखता क्या है कि भगवान के दूतों की तरह चार हट्टे-कट्टे पुलिस वाले खड़े हैं। वे तुरन्त अन्दर घुस आए। अब कबीर की जान में जान आ गई। नकली सोहनलाल के तो होश उड़ गए। उसके हाथ से पिस्तौल नीचे गिर गई और धमाके की आवाज़ के साथ अपने आप गोली चल गई। सारा कमरा गूँज उठा और दीवारें थर-थरा उठीं।

पुलिस वाले भौंचक्के देख रहे थे। "देखते क्या हो ? पकड़ लो इस बदमाश को !" कबीर ने गरज कर कहा।

पुलिस वालों की समझ में न आया कि यह सब क्या हो रहा है ! फिर भी उन्होंने लपक कर उस आदमी को पकड़ लिया। आखिर कबीर ने उन सबको अपनी मोटर पर चढ़ा लिया और थाने की ओर ले जाते हुए पूछा- "तुम लोगों को कैसे मालूम हुआ कि यह बदमाश चकमा देकर ज़बर्दस्ती मुझसे चेक ले रहा था ?" यह सुन कर पुलिस वालों के मुँह पर हवाइयाँ उड़ने लगीं। उनको कुछ पता न था कि बात क्या है ? उन्होंने कहा-"क्या यह ज़बर्दस्ती आप से चेक कटवा रहा था ! हमें तो यह मालूम ही न



था। आपकी मोटर कानून के खिलाफ गली में आई थी। आपको उस ओर से नहीं आना चाहिए था। आप पर मुकदमा चलाने के लिए हमने मोटर का नम्बर तो नोट कर लिया था। फिर हमने सोचा कि जिस घर के सामने यह मोटर रुकी हुई है उसी में मोटर का मालिक भी होगा। इसलिए हम यहाँ आकर बाहर खड़े-खड़े इन्तज़ार करते रहे। बड़ी देर के बाद एक आदमी इस घर की तरफ आया। लेकिन हमें देख कर वह उलटे पाँव लौट जाने लगा। हमने उस आदमी से पूछा भी कि यह किसका घर है ? लेकिन उसने जवाब दिया -"यह तो मुझे

मालूम नहीं। मैं भूल कर इस घर में घुस रहा था।" यह कह कर वह चला गया। हम लोग बड़ी देर तक यहीं बैठे रहे। आखिर जब जी ऊब गया तो किवाड़ खटखटाया। हम लोग तो सिर्फ़ मोटर के मालिक को खोज रहे थे। हमें क्या पता कि इस घर में क्या हो रहा है ? किवाड़ खोलते ही इसके हाथ से पिस्तौल गिर गई और आप चिल्लाए कि पकड़ लो इसे ! हमने दाल में कुछ काला देख कर तुरन्त इसे पकड़ लिया। इस के अलावा तो हमें कुछ मालूम नहीं था।" कबीर ने यह सुन कर नकली सोहनलाल की तरफ देखते हुए हँस कर कहा- "देखा भाई, तुमने ! तुम्हारी यह चाल आखिर कैसे बेकार हो गई ? मैं गली की मोड़ पर 'प्रवेश मना' वाली तख्ती नहीं देख सका और जल्दी में घुस आया। कभी-कभी बुराई से भी अच्छाई हो जाती है। इसी से तो पुलिस वाले ठीक समय पर आ पहुँचे और मैं तुम्हारे चंगुल से छूट गया। देखो, भगवान की लीला कैसी विचित्र होती है !" फिर उसने पुलिस वालों से कहा-"जो इस घर में आना चाहता था और तुम लोगों को देख कर लौट गया वह ज़रूर इसका दोस्त रामसिंह होगा। उसे भी खोज कर पकड़ लेना !" यह कह कर उसने उन लोगों को ले जाकर थाने में उतार दिया और उस बदमाश को हिरासत में बन्द देख कर चला गया।

उसके बाद पुलिस वालों ने रामसिंह को भी पकड़ लिया। दफ्तर में जो नमकहराम नौकर था, वह भी पकड़ा गया। आखिर साबित हुआ कि तीनों पुराने अपराधी हैं और उन्हें कड़ी से कड़ी सज़ा दी गई।

कबीर ने अनजान में पुलिस का कानून तोड़ा। लेकिन संयोग ऐसा हुआ कि इससे उसे फायदा ही हुआ। ठीक समय पर पुलिस वाले पहुँच गए और वह उस बदमाश के हाथों लुट जाने से बच गया।





पाँचों पाण्डबों में धर्मराज सबसे बड़े भाई थे। उनका वचन अमोघ था। वे कभी झूठ नहीं बोलते थे और हमेशा धर्म का पालन करते थे।

इसीलिए उनकी बात कभी व्यर्थ नहीं होती थी। उनके चारों भाई उनकी इतनी इज्जत करते थे कि वे उनकी बात को वेद वाक्य समझते थे और उस पर अक्षरशः पालन करते थे।

धर्मराज हमेशा अपने भाइयों को उपदेश दिया करते थे-"जो काम आज किया जा सके, उसे कल के लिए कभी मत छोड़ो। क्योंकि मनुष्य की देह नश्वर है। कोई नहीं कह सकता कि वह ठीक कब तक जिएगा और अगले क्षण क्या होने वाला है।" उन के भाई इस उपदेश के अनुसार ही चलते थे और जो काम आज किया जा सकता था उसे कल के लिए कभी नहीं छोड़ते थे।

एक बार धर्मराज ने राजसूय यज्ञ करना चाहा। सारी तैयारियाँ हो गईं थीं। सब राजाओं को निमन्त्रण भेजा गया और वे सभी समय पर हस्तिनापुर आए। उन सब की समुचित सेवा सुश्रूषा होने लगी। इतने में भगवान कृष्ण भी वहाँ पधारे। उनके आने की खबर सुनते ही धर्मराज बहुत आनन्दित हुए। उन्होंने स्वयं जाकर कृष्ण की अगवानी की और सीधे उन्हें अपने अन्तःपुर में ले गए।

कृष्ण और धर्मराज वार्तालाप करने लगे और भीमसेन कमरे के दरवाज़े पर खड़े हो कर पहरा देने लगे।

उसी समय एक बूढ़ा ब्राह्मण धर्मराज के दर्शन करने आया। उसे देख कर भीमसेन ने कहा -"इतनी जल्दी आपको क्या आ पड़ी है ? क्या आप कल नहीं आ सकते ? धर्मराज अभी भगवान कृष्ण से बातें कर

ज्योतिराज शर्मा



रहे हैं ! ज़रूरी काम में हैं। उन्हें अभी क्यों छेड़िएगा ?"

तब उस ब्राह्मण ने कहा-"जल्दी ही आ पड़ी है। इसीलिए तो दौड़ा-दौड़ा आया हूँ ! परसों ही मेरी बेटी का ब्याह होने वाला है और घर में भूँजी भाँग तक नहीं है ! मैंने सोचा कि धर्मराज ही मेरी लाज रख सकते हैं। बस, इसीलिए दौड़कर यहाँ आ गया !" ब्राह्मण की बात सुन कर भीमसेन चुप हो गए और उसे तुरन्त अन्दर जाने दिया।

थोड़ी ही देर बाद वह बूढ़ा खुशी से दमकता हुआ चेहरा लेकर बाहर आया। उसके चेहरे पर आनन्द तो झलक रहा था। लेकिन हाथ बिलकुल खाली थे। यह अजीब बात थी। भीमसेन से न रहा गया। उन्होंने उससे पूछा-"क्यों भैया ! बहुत खुश मालूम पड़ते हो ! बात क्या है ?" तब ब्राह्मण ने जवाब दिया-"खुश नहीं तो और क्या ? धर्मराज के दर्शन कहीं बेकार जाते हैं ?"

इस पर भीमसेन ने पूछा-"तो फिर हाथ खाली क्यों दीख पड़ता है ?" तब ब्राह्मण बोला-"इससे क्या होता है ? उन्होंने कल सबेरे आने को कहा है। मेरा काम ज़रूर बन जाएगा !" यह कह कर ब्राह्मण खुशी-खुशी वहाँ से चला गया।

ब्राह्मण की बात सुन कर भीमसेन को बहुत आश्चर्य हुआ। उसकी समझ में नहीं आया कि बात क्या है ? उसने बहुत दिमाग लड़ाया। आखिर उसे एक उपाय सूझ गया। उसने तुरन्त जाकर विजय के नगाड़े बजाने का हुक्म दे दिया। नगाड़े की आवाज़ से आसमान गूँज उठा। ये नगाड़े तभी बजते हैं जब राजा की सेना को कहीं जाना होता है या राज्य में कोई विजयोत्सव मनाया जाता है। इसलिए नगाड़े का शब्द सुनते ही धर्मराज को बहुत अचरज हुआ।



उन्हें कारण नहीं जान पड़ा कि यह असमय का नगाड़ा क्यों बज उठा है। वे हैरान हो गए। यह देख कर भगवान कृष्ण ने भी बहुत आश्चर्य प्रगट किया। धर्मराज ने तुरन्त भीमसेन को बुला कर पूछा-"भैया ! यह नगाड़ा क्यों बज रहा है ? किस के हुक्म से बजाया जा रहा है ? ज़रा जाकर देख तो आओ कि बात क्या है ?"

भीमसेन सिर झुका कर बोला-"महाराज ! मैंने ही नगाड़ा बजाने का हुक्म दिया है। कारण यह है कि आपका वचन कभी झूठा नहीं होता। अभी जो ब्राह्मण यहाँ आया था, उससे मैंने सुना कि आपने उसे कल सबेरे आने का हुक्म दिया है। इसका मतलब यह हुआ कि कल सबेरे तक वह ब्राह्मण, उसका परिवार और हम सभी सकुशल रहेंगे। कल तक हम को और हमारी सम्पदा को कोई आँच नहीं आएगी। हम पर किसी तरह की मुसीबत नहीं आएगी ! यही नहीं; आप के उस वचन से यह भी स्पष्ट होता है कि कल सबेरे तक हम लोगों का न मन ही बदलेगा और न हमारे इरादे ही बदलेंगे। यानी आपने हम सब के नश्वर जीवन को कल सबेरे तक अभय-दान दिया। मौत हमारी तरफ नज़र भी नहीं फेरेगी। चञ्चला लक्ष्मी को भी आपने कल सबेरे तक अचञ्चला बना दिया। बताइए तो भला, इससे बढ़ कर खुशी की बात और क्या हो सकती है ? इसी से खुशी के मारे मैंने नगाड़े बजाने का हुक्म दे दिया। क्या इसमें मुझसे कुछ गलती हुई है ?"

यह सुन कर बुद्धि-शाली धर्मराज ने भीमसेन से कुछ नहीं कहा। अपनी भूल वे समझ गए और सर झुका कर सोचते रहे। भगवान कृष्ण का ही तो यह सारा खेल था ? वे भीमसेन की ओर देख कर मुसकुराने लगे कि धर्मराज को अच्छा सबक पढ़ाया गया।



मोतियों की फसल

कर्णाटक देश में किसी समय नागराज नाम का एक किसान रहता था। उसका हृदय पत्थर की तरह कठोर था। इसके अलावा वह परले सिरे का हठी और ज़िद्दी था। उसे देख कर बच्चे सभी डर से काँपने लगते थे और दूर भाग खड़े होते थे।

एक दिन की बात है। बरसात के पहले छींटे धरती को चूम गए थे। किसान खेत जोतने के लिए कन्धे पर हल रखे बैलों को टिटकारते चले जा रहे थे। नागराज ने भी कन्धे पर हल रखा और बैलों के लिए अपने गोठ में गया। उसके एक ही जोड़ा बैल थे। उसने गोठ में जाकर देखा तो वहाँ एक बैल खड़ा था। दूसरा धरती पर पड़ा हुआ था। नागराज ने साँटी से मार कर उसे उठाने की कोशिश की। लेकिन वह नहीं उठा ! उठता कैसे ? जान रहे, तब न ? वह रात में ही मर गया था।

अब तो नागराज बड़ी चिन्ता में पड़ गया। हल जोतने के लिए दो बैल चाहिए। अब दूसरा बैल कहाँ से ले आए ? पड़ोसियों से उसकी बनती नहीं थी जो किसी से माँग लेता। खरीदने के लिए पास रुपए भी नहीं थे। नागराज सोचता खड़ा रह गया।

इतने में उसकी पत्नी वैदेही कूड़ा-करकट फेंकने के लिए वहाँ आई। उसे देखते ही नागराज को एक उपाय सूझ गया। उसने कहा-"अरी ! जल्दी खेत में चल ! वहाँ कुछ काम है !" वैदेही बड़ी पतिव्रता थी। उसने कुछ भी पूछा-ताछा नहीं कि क्या काम है। घर के किवाड़ लगा कर सीधे अपने पति के पीछे-पीछे चल पड़ी।

एक ही बैल लेकर नागराज पत्नी के साथ खेत में पहुँचा। वहाँ जाकर उसने हल बाँधा। पालो का एक सिरा बैल की गर्दन पर रख दिया। उसे दूसरी ओर पत्नी के

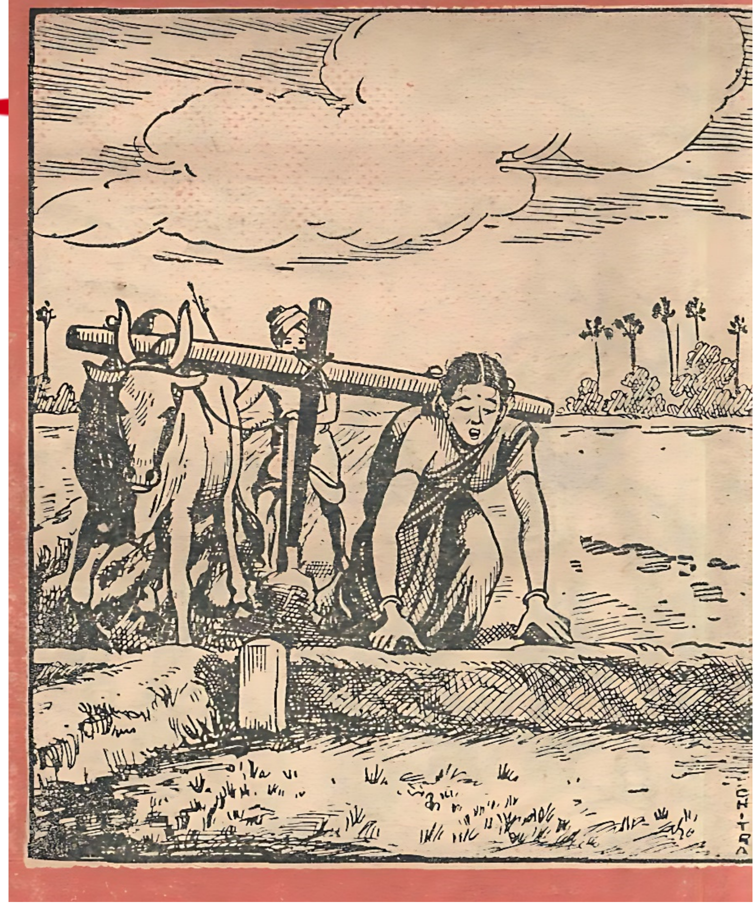
कुमारी बीना

कन्धे पर लगा दिया। फिर हाथ में साँटी लेकर बोला-"चल ! बैल के साथ चल !" वैदेही कुछ नहीं बोली। पालो कन्धे पर रख कर, बेचारी बैल के साथ चलने लगी। लेकिन बैल के बराबर कैसे चलती ?

दम भर में ही वह हॉफने लगी। पालो की रगड़ से उसकी गर्दन छिल गई। फफोले फूटे और खून बहने लगा। नागराज ने देखा कि औरत पिछड़ रही है। सटासट साँटी चला दी। वैदेही की पीड़ा दुस्सह हो उठी। लेकिन बेचारी ने मुँह से आह तक न निकाली। पच-मर कर भी उसी तरह चलती रही।

उस समय उस देश का राजा सुजनसिंह था। अपनी प्रजा का समाचार जानने के लिए वह स्वयं घोड़े पर सवार होकर राज में घूमा करता था। संयोग से उस दिन वह नागराज के खेत के पास से निकला और उसने वैदेही की यन्त्रणा देखी।

उस कठोर दृश्य पर नज़र पड़ते ही उसका दिल पानी-पानी हो गया। उसे बहुत गुस्सा आया। वह चाहता तो नागराज को तुरन्त शूली पर टँगवा सकता था। लेकिन वह परम दयालु था। इसलिए नज़दीक गया और गुस्सा पीकर बोला-"भाई ! तुम



इस औरत को छोड़ दो ! मैं तुम्हें दूसरा बैल खरीदने के लिए रुपए दूँगा।"

यह कह कर उसने उसी वक्त नौकर को कुछ अशर्फियाँ देकर बैल खरीद लाने को भेजा।

फिर उसने वैदेही से कहा-"बेटी ! तुम घर जाकर घाव पर पट्टी बाँधो। मेरा नौकर एक घण्टे के अन्दर ही तुम्हारे पति को एक अच्छा बैल खरीद कर ला देगा।"

वैदेही उठ कर कराहती हुई जाने लगी। लेकिन नागराज ने राजा को एहसान जताने के बदले क्रोध से पैर पटक कर कहा-



"मैं घण्टे भर तक चुपचाप नहीं बैठ सकता। नौकर जब तक बैल नहीं लाता तब तक यह नहीं जा सकती।"

राजा उसकी ऐसी मूर्खता भरी ज़िद्द देख कर भौंचक्का रह गया।

आखिर उसने अपने को सम्हाल कर कहा-"भाई ! इसे तुम तुरन्त घर भेज दो। तुम्हें इतनी जल्दी है तो आओ ! इसके बदले मैं ही तुम्हारे हल में जुत जाता हूँ।" यह कह कर उसने अपने कन्धे पर पालो उठा कर धर लिया।

नागराज ने उसे रोका तक नहीं। वैदेही उसे रोकना चाहती थी; लेकिन सुध-बुध खो कर वैसे ही बैठी रह गई। नागराज झुञ्झला रहा था कि देरी हो रही है। उसने साँटी उठा ली और बैल की तरह राजा को भी पीटते हुए खेत जोतने लगा। वैदेही के हृदय में घोर पीड़ा हुई। राजा को बैल की तरह पिटते देख वह बर्दाश्त न कर सकी। लेकिन बेचारी कर क्या सकती थी?

चुपचाप भगवान से प्रार्थना करने लगी-"हे भगवान ! मेरी प्रार्थना सुन लो ! इस सज्जन राजा को साँटी की मार न लगने दो। पालो की रगड़ से इसके कन्धे पर घाव न होने दो। ऐसा करो, जिससे इसको बिलकुल पीड़ा न हो !"

भगवान ने भी उस पतिव्रता की पुकार सुन ली। उनकी कृपा से नागराज के बहुत मारने पर भी राजा को चोट बिलकुल न आती थी। पालो का बोझ फूलों की माला के समान हलका हो गया था। पीड़ा बिलकुल न रही। यह देख कर राजा को बहुत अचरज हुआ ! उसने सोचा-"यह स्त्री सचमुच बहुत बड़ी पतिब्रता है।"

इतने में नौकर नया बैल ले आया। तब कहीं राजा को छुट्टी मिली। राजा ने तुरन्त नौकर के साथ वैदेही को घर भेज दिया।

वैदेही ने जाते जाते राजा को आशीर्वाद दिया। राजा भी वहाँ से चला गया।

बाकी किसानों के साथ नागराज ने भी समय पर खेत बो दिया। बीज जल्दी-जल्दी उग आए। लेकिन जितनी दूर तक राजा ने हल जोता था, उतनी दूर तक की फसल अच्छी नहीं हुई। क्योंकि फाल ज़मीन में गहरी नहीं गई थी। इसलिए पौधे खूब नहीं बढ़े।

नागराज ने जब यह देखा तो सोचा- "राजा के कारण ही मेरा यह नुकसान हुआ।" इसलिए उसने घर आकर पत्नी से कहा-"उस निकम्मे के कारण ही खेत में अच्छी फसल नहीं हुई। अब की कहीं वह आए, तो बता दूँ बच्चू को !"

यह सुन कर उसकी पत्नी बेचारी मन ही मन काँपने लगी और भगवान से प्रार्थना करने लगी-"हे भगवान! ऐसा करो जिस से इनके द्वारा उस सज्जन राजा का कोई नुकसान न हो। उस देवता पर कोई सङ्कट न आए।"

एक दिन नागराज हँसिया लेकर खेत की ओर गया। वह मन ही मन राजा पर बहुत गुस्सा हो रहा था। खेत में जाकर उसने दूर से उस ओर



देखा, जहाँ राजा ने जोता था और जहाँ पौधे खूब नहीं बढ़े थे। गौर से देखने पर मालूम हुआ कि वहाँ की बालें चमक रहीं हैं और बाकी सारे खेत की बालों की तरह नहीं हैं। उसे शक हुआ और नज़दीक जाकर देखा।

उन बालों में धान के दाने नहीं थे, मोती भरे थे। यह देख कर नागराज को अपनी आँखों पर विश्वास न हुआ। उसके हाथ से हँसिया छूट कर नीचे गिर पड़ी। वह झट दौड़ा-दौड़ा राजा के पास गया और पैरों पर गिर कर बोला -"महाराज ! मैं सोच रहा था कि आपके कारण मेरी

फसल मारी गई है। लेकिन हुआ ठीक उल्टा। जितनी दूर तक हल आपने जोता था, उतनी दूर तो मोती-ही-मोती लटक रहे हैं।"

उसकी बातें राजा की समझ में ठीक ठीक नहीं आईं। इसलिए उसने वैदेही को बुलवाया और पूछा कि-"सच-सच बताओ ! क्या बात है ?" जब जब वैदेही आई और उसने राजा को सकुशल देखा तो फूली न समाई और बोली-"भगवान ने मेरी प्रार्थना सुन ली।" तब राजा ने चकित होकर बार-बार पूछा कि-"बात क्या है ? दानों के बदले मोती कैसे उगे ?" वैदेही ने सङ्कोच के साथ कहा-"महाराज ! आपने मुझ पर तरस खाकर मेरे बदले पालो अपने कन्धे पर रखा था। हमारे लिए बैल भी खरीद दिया था। फिर भी मेरे पति को आप पर गुस्सा था। वे आपको कोसा करते थे ! भला कृतघ्नता से बढ़ कर महापाप और क्या हो सकता है ? पति को ऐसा पाप करते देख कर मैं चुप कैसे रहती ! मैंने भगवान से प्रार्थना की कि वे आप पर कोई आँच न आने दें और मेरे पति को इस पाप से बचा ले। शायद भगवान ने मेरी प्रार्थना सुन ली और आपके जोते हुए खेत में मोती उग आए।" पतिब्रता की बातें सुन कर राजा की आँखों में आँसू उमड़ आए।

यह दृश्य देख कर आखिर नागराज का पत्थर जैसा दिल भी पिघल गया। वह रोते हुए राजा के पैरों पर गिर पड़ा और क्षमा-याचना करके कहने लगा-"ये मोती आपके हैं। इसलिए मैं आप ही के चरणों में भेंट करता हूँ।"

लेकिन राजा ने कहा-"नहीं ! मोती तो तुम्हारी पत्नी के श्रम के प्रभाव से उगे हैं। इसलिए वे वास्तव में तुम्हारे ही हैं। तुम्हीं रख लो !"





बरहमपूर शहर में परमेश्वर नाम का एक धनी आदमी रहता था। वह सिर्फ धनी ही नहीं था; खूब पढ़ा-लिखा भी था। वह बड़ा ही सज्जन आदमी था।

कालेज में पढ़ते वक्त वह सूट-बूट में रहा करता था। लेकिन धीरे-धीरे उसने हिन्दुस्तानी पोशाक और चप्पल पहनना शुरू कर दिया।

एक बार परमेश्वर को मद्रास जाना पड़ा। वह पहले दर्जे में सफर करने का आदी था। इसलिए उस दिन भी उसने पहले दर्जे का टिकट कटा लिया और मद्रास मेल पर चढ़ गया।

उस डिब्बे में सिर्फ़ एक ही और मुसाफिर था और वह अंग्रेज़ था। परमेश्वर की धोती, कुर्ता और चप्पल देख कर उसने समझा कि यह भूल कर इस डिब्बे में चढ़ रहा है। इसलिए "यह पहला दर्जा है !" कह कर उसने उसे रोकना चाहा। "हाँ ! यह मुझे मालूम है !" यह कह कर परमेश्वर डिब्बे में चढ़ गया। यह देख कर वह अंग्रेज़ जल-भुन कर रह गया। परमेश्वर ने बेंच पर अपना बिछौना बिछाया और चप्पल नीचे छोड़ कर बिछौने पर बैठ गया। चप्पल को देख कर अंग्रेज नफरत से भर गया। उसने कहा-"देखो ! मुझे बूट उतारने की ज़रूरत नहीं। ऐसे ही लेट जाता हूँ।"

यह सुन कर परमेश्वर को बहुत गुस्सा हो आया। उसने कहा- "महाशय ! मैं भी एक सभ्य व्यक्ति हूँ। मैं आपके जैसे बहुत से लोगों का जानता हूँ। वे आपके जैसा बर्ताव नहीं करते। हमें आप की तरह हमेशा जूते पहने रहने की ज़रूरत नहीं।" यह कह कर वह दूसरी ओर घूम कर बैठ गया।

उस गोरे को अब और भी गुस्सा आया। बेंच के नीचे चप्पल को देख-देख

कुन्दन

कर उसके रोङ्गटे खड़े होने लगे। उसने किसी न किसी तरह इस काले आदमी का अपमान करने का निश्चय कर लिया।

थोड़ी देर बाद अखबार पढ़ते हुए परमेश्वर सो गया। तब साहब ने चुपके से परमेश्वर के चप्पल उठा लिए और खिड़की से बाहर फेंक दिए। फिर चुपचाप अखबार देखने लग गया, जैसे वह कुछ जानता न हो!

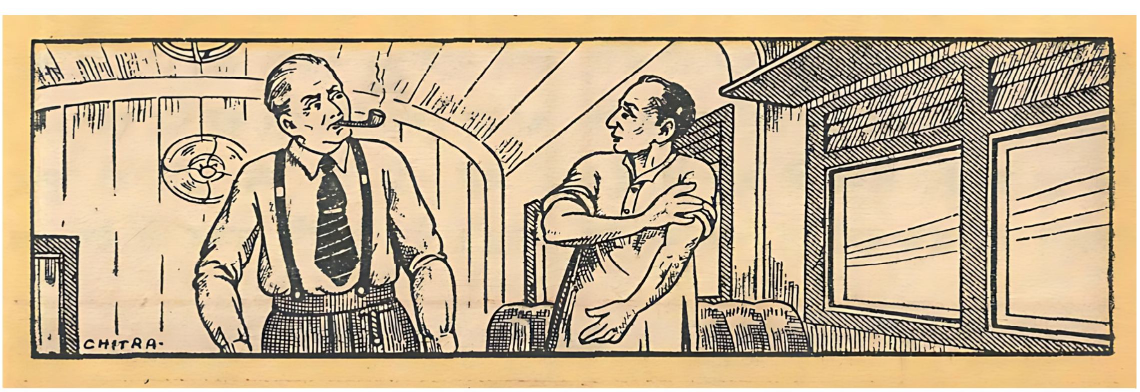
अगले स्टेशन पर गाड़ी रुकी और परमेश्वर की नींद टूटी। वह उठ कर बैठ गया और चप्पल ढूँढने लगा। परमेश्वर को इस तरह ढूँढते देख कर वह गोरा मुसकुराने लगा। यह देख कर परमेश्वर को सारा रहस्य मालूम हो गया। लेकिन प्रगट रूप से वह कुछ नहीं बोला।

यों एक घण्टा बीत गया। दोनों आदमी चुप बैठे रहे। इतने में गोरा उठा और पाखाने में चला गया। उसका ऊनी कोट खूँटी से लटक रहा था। परमेश्वर ने चुपके से कोट उतार लिया और खिड़की से बाहर फेंक दिया। वह कोट सत्तर-अस्सी रुपए से कम का न होगा। ऐसे कीमती कोट को फेंकते हुए परमेश्वर बिलकुल नहीं हिचकिचाया।

गोरे ने पाखाने से बाहर आकर देखा तो कोट नदारद। वह आग-बबूला हो गया। "मेरा कोट कहाँ है?" उसने गरज कर परमेश्वर से पूछा।

परमेश्वर ने अखबार पर से नज़र हटाए बिना निर्भीक-खर में जवाब दिया-"जी ! आपका कोट ? शायद वह मेरे चप्पलों को ढूँढने गया है !"

साहब का पारा चढ़ गया। लेकिन तब तक परमेश्वर भी आस्तीन चढ़ा कर तैयार हो गया था। पहलवान के से उसके हट्टे-कट्टे हाथ देख कर साहब खून का घूँट पीकर रह गया।



CHANDAMAMA (Hindi) OCTOBER 1952 Regd. No. M. 5452



रङ्गीन चित्र - कथा, चित्र – ३